जैन मन्दिर और हरिजन

जैन संस्कृतिके आधारपर होनेवाली समाजरचनामें मानव-मानवके बीच छुआछूतको स्थान मिलना असम्भव है। यद्यपि कुछेक जैन ग्रन्थोंमें छुआछूतका उल्लेख है और जैन समाजमें उसका प्रचलन भी एक अर्से से चला आ रहा है। परन्तु यह निश्चित बात है कि जैन संस्कृतिके ऊपर वैदिक संस्कृतिका प्रभाव पड़ जानेके कारण ही यह सब कुछ हुआ है। इसलिए पहली बात तो यह है कि यदि भारतवर्षसे छुआछूतको समाप्त किया जाता है तो जैनोंको तो प्रसन्न ही होना चाहिये। दूसरी बात यह है कि जैन मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेश करनेका विरोध करनेसे पहले हमें यह सोच लेना चाहिए कि समग्र भारतवर्षसे यदि छुआछूतको समाप्त कर दिया जाता है तो जैनोंमें इसका प्रचलन बना रहना असम्भव है।

हरिजन-मन्दिर-प्रवेश बिलका केवल इतना ही आशय है कि जो स्थान सर्वसाधारणके उपयोगके लिए खुला हुआ है उस स्थानमें जानेसे हरिजनोंको सिर्फ इसलिए नहीं रोका जा सकता है कि वे अछूत हैं। अतः जैनोंको इससे डरनेकी बिलकुल आवश्यकता नहीं है कि हरिजन जैसी चाहे वैसी हालतमें जैन मन्दिरमें प्रवेश करेंगे और वहाँपर मनचाहा काम करेंगे; क्योंकि कानून वैदिक मन्दिरोंके समान जैन मन्दिरोंकी सुरक्षा और सुव्यवस्थाका भी ध्यान रखा जायगा।

जैनोंमें हरिजन-मन्दिर प्रवेश बिलके बारेमें एक भ्रम यह भी फैला हुआ है कि इस बिलसे हरिजनोंको वे अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो कि सिर्फ एक जैनीको ही प्राप्त हो सकते हैं। मैं कहता हूँ कि जैनोंको यह भ्रम भी अपने दिलसे निकाल देना चाहिये, क्योंकि बिलके जरिये अजैन ब्राह्मणको भी वे अधिकार प्राप्त नहीं हो सकते जो सामान्यतः एक जैनीको प्राप्त हैं।

उपर्युक्त कथनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जैन मन्दिरोंके बारेमें हरिजन-मन्दिर-प्रवेश बिल निम्नलिखित रूपसे लागू होता है—

(१) प्रत्येक जैनी, चाहे वह हरिजन ही क्यों न हो, उन सब अधिकारोंके साथ जैन मन्दिरमें प्रवेश पानेका अधिकारी है, जो सामान्यतः जैन होनेके नाते स्वभावतः उसे प्राप्त हो जाते है।

(२) जबकि अजैन ब्राह्मण आदि जैन मन्दिरमें प्रवेश कर सकते हैं तो जिस तरहसे और जहाँतक वे मन्दिरके अन्दर प्रवेश करते हैं उस तरहसे और वहाँतक अछूत होनेके कारण अजैन हरिजनोंको प्रवेश करनेसे नहीं रोका जा सकता।

(३) जैन संस्कृतिकी धार्मिक मर्यादा, मन्दिरकी पवित्रता और मन्दिरके अन्दर शान्ति कायम रखनेके उद्देश्यसे मन्दिरकी व्यवस्थापक कमेटी मन्दिर-प्रवेशके विषयमें सामान्य रूपसे ऐसे नियमोंका निर्माण कर सकती है, जो अछूतताको प्रोत्साहन देनेवाले न हों।

जो लोग मन्दिरोंके बारेमें हरिजन-मन्दिर-प्रवेश-बिल लागू होनेका विरोध करते हैं उनकी मुख्य दलीलें निम्न प्रकार हैं—

(१) जैन हिन्दू नहीं है, इसलिए यह बिल जैन मन्दिरपर लागू नहीं होना चाहिये।

(२) ऐसा एक भी हरिजन नहीं है, जो जैनधर्मका माननेवाला हो।

(३) धर्मके क्षेत्रमें शासनको हस्तक्षेप करनेका अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहली दलीलके बारेमें यही कहूँगा कि जैन हिन्दू रहे हैं और रहेंगे। जैनियोंका हित इसीमें है कि वे एक स्वरसे अपने आपको हिन्दू घोषित करें। जैनियोंका यह भय बिलकुल निराधार है कि हिन्दू शब्द वैदिक संस्कृतिपरक होनेके कारण जैन संस्कृति केवल वैदिक संस्कृतिकी शाखा मात्र रह जाती है। वास्तवमें "हिन्दू शब्द वैदिक संस्कृतिपरक है" यह बात असत्य है।

अब तक वैदिकों और जैनोंके परस्पर जो सामाजिक सम्बन्ध बने चले आ रहे हैं उन्हें और अधिक सुदृढ़ करनेकी आवश्यकता है और ऐसा होनेपर भी यह तो सर्वथा असंभव है कि ईश्वरकर्तृत्ववाद तथा वर्णाश्रमव्यवस्थाको लेकर परस्पर पूर्व और पश्चिम जैसा मौलिक भेद रखनेवाली वैदिक और जैन संस्कृतियोंमेंसे एक संस्कृतिको दूसरी संस्कृतिकी शाखामात्र मान लिया जायगा। भारतीय राज्यके असाम्प्रदायिक राज्य घोषित हो जानेपर ऐसा होना और भी असंभव है।

दूसरी दलीलका बहुत कुछ उत्तर ऊपर दिया जा चुका है। विशेष यह कि "एक भी हरिजन जैनधर्मका माननेवाला नहीं है" यह जैन समाजके लिये शोभाकी चीज नहीं है। इससे तो जैन समाजकी कट्टर अनुदारता ही प्रकट होती है और इसीका यह परिणाम है कि जैनोंकी संख्या अंगुलियोंपर गिनने लायक रह गई है। दूसरी बात यह है कि यदि कदाचित् कोई हरिजन जैनधर्ममें आज दीक्षित होनेको तैयार हो तो जैन लोग अपनी मर्जीसे उसे मंदिरके अन्दर जाने देने व पूजा करनेकी इजाजत देनेको कहाँ तैयार हैं? जिससे इस दलीलके आधारपर जैन मन्दिरोंको हरिजनमंदिरप्रवेश बिलसे अलग कराकर हरिजनोंको जैन मंदिरमें न आने देनेकी अपनी चतुराईको जैन समाज सफल बना सके। हरिजन जैनमंदिरमें प्रवेश न करें, यदि हमारी ऐसी इच्छा है, तो इसका एक ही उपाय हो सकता है कि अजैन मात्रको जैन-मंदिरमें न आने दिया जाय, परन्तु जैन समाजका एक भी व्यक्ति यहाँ तक कि जैन मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशका विरोधी भी इतना मूर्ख नहीं हो सकता है जो यह कहनेको तैयार हो कि जैन मन्दिरमें कोई भी अजैन प्रवेश पानेका अधिकारी नहीं है। इसलिए जैन समाजको चाहिए कि बिलकी मन्शाके मुताबिक वह अजैन हरिजनोंको भी दूसरे अजैनोंकी तरह जैन मन्दिरमें उदारतापूर्वक आनेकी इजाजत दे दे।

तीसरी दलीलके बारेमें मैं इतना ही कहूँगा कि यदि जनता स्वयं अपने अन्दरसे राष्ट्रीयताके घातक तत्त्वोंको निकाल दे तो निश्चय ही शासनको इसके लिए कानून बनानेकी आवश्यकता नहीं है। परन्तु दुर्भाग्यसे जनतामें अभी इतनी जागृत ही कहाँ पैदा हुई है? इसलिए छोटी-छोटी बातोंके लिये भी कानून बनानेमें बड़ी मजबूतीके साथ सरकारको अपनी अमूल्य शक्ति खर्च करनी पड़ रही है। रही धार्मिक बातोंमें शासनके हस्तक्षेपकी बात, सो इसके बारेमें यही कहा जा सकता है कि जो तत्त्व राष्ट्रीयताका घातक है वह धर्मक्षेत्रकी मर्यादामें कभी भी नहीं आ सकता है।

कुछ लोग बिना सोचे समझे यह कहा करते हैं कि जैन भाइयोंने देशको स्वतंत्र करानेमें कांग्रेसको अपने त्याग और बलिदान द्वारा जो सहयोग दिया है उसका पुरस्कार जैनियोंको उनके धार्मिक अधिकारोंका अपहरण करके दिया जा रहा है। मैं ऐसे लोगोंसे पूछता हूँ कि यदि जैन भाई देशकी स्वतंत्रताके लिए कांग्रेसके साथ लड़ाईमें सम्मिलित न होते तो क्या देशद्रोहका काम उन्हें शोभा दे सकता था? और जैनोंके योग न देनेसे क्या देशको स्वतन्त्रता मिलना कठिन हो जाता? इन दोनों प्रश्नोंका उत्तर 'हाँ' में देना जैन समाजके किसी भी व्यक्तिके लिए कठिन ही नहीं, असंभव है। मैं तो यह कहता हूँ कि उक्त प्रकारके शासनके बारेमें आक्षेप करना समस्त जैन समाजको कलंकित करनेके सिवाय और कुछ नहीं है।

आशा है जैन बन्धु इसपर विचार कर समुचित मार्ग अपनायेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२]

अब तक कांग्रेसका और हिन्दू महासभाका भी यही दृष्टिकोण रहा है कि जैन हिन्दुओंसे पृथक् नहीं हैं, इसलिए मध्यप्रान्तीय सरकारने प्रान्तीय असेम्बलीमें जब हरिजन-मन्दिर-प्रवेश बिल विचारार्थ उपस्थित किया था तब उस बिलमें निर्दिष्ट 'हिन्दू' शब्दकी व्याख्यामें जैनियोंका भी समावेश था, जिससे जैन मन्दिर भी उक्त बिलके दायरेमें आते थे, लेकिन जैन समाजको यह सह्य नहीं था, इसलिए उसकी ओरसे उक्त बिलमें निर्दिष्ट 'हिन्दू' शब्दकी व्याख्यामेंसे जैन शब्दके निकलवानेके लिये काफी प्रयत्न किया गया था। यद्यपि जैन समाजके इस रवैयेका उस समय 'सन्मार्ग प्रचारिणी समिति'की ओरसे मैंने विरोध किया था। परन्तु जैन समाजको उसके अपने प्रयत्नमें सफलता मिली और हरिजन-मन्दिर-प्रवेश बिलके दायरेमें जैन मन्दिरोंको मध्यप्रांतीय सरकारने पृथक् कर दिया। हो सकता है कि जैन समाजको अपनी इस तात्कालिक सफलतापर गर्व हो, परन्तु मुझे आज भी मध्यप्रान्तीय सरकारके दृष्टिकोणमें यकायक परिवर्तनपर आश्चर्य और जैन समाजकी राजनीतिक अदूरदर्शिता और सांस्कृतिक अज्ञानतापर दुःख हो रहा है।

जैन समाजकी आम धारणा यह है कि हिन्दू संस्कृतिका अर्थ वैदिक संस्कृति होता है और चूंकि जैन संस्कृति अपनी अनूठी मौलिक विशेषताओंके कारण वैदिक संस्कृतिसे बिलकुल निराला स्थान रखती है। इसलिए उसकी (जैनसमाजकी) रायमें उसकी इच्छाके अनुसार सरकारको जैनियोंका हिन्दुओंसे पृथक् अस्तित्व स्वीकार करना चाहिए। जबसे हमारे देशमें राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना हुई है तभीसे जैन समाजके नेता और समाचारपत्र इस बातका अविराम प्रयत्न करते आ रहे हैं कि जैन हिन्दुओंसे पृथक् अपना स्वतन्त्र आस्तित्व रखते हैं।

जैन ससाजके सामने सबसे पहले विचारणीय बात यह है कि जैन संस्कृतिके अनुसार मानवजातिमें अछूत या हरिजन नामका पृथक् वर्ग कायम ही नहीं किया जा सकता है। जैनग्रन्थोंमें जो शूद्रोंके एक वर्गको अछूत बतलाया गया है वह जैन संस्कृतिके लिये वैदिक संस्कृतिकी ही देन समझना चाहिये। जिस प्रकार परिस्थितिवश किसी समय वैदिक संस्कृतिमें जैन संस्कृतिके सिद्धांत प्रविष्ट कर लिये गये थे उसी प्रकार जैन संस्कृतिमें भी परिस्थितिवश एक समय वैदिक संस्कृतिके कतिपय सिद्धान्त प्रविष्ट कर लिए गये थे, उन सिद्धांतोंमें शूद्रोंके एक वर्गको अछूत मानना भी शामिल है। इसलिये हरिजनोंका मंदिर-प्रवेश स्वीकार कर लेनेसे वैदिक संस्कृतिका तो ह्रास कहा जा सकता है परन्तु इससे जैन संस्कृतिका तो कलंक ही दूर होता है।

दूसरी विचारणीय बात यह है कि मानवसमष्टिमें छूत और अछूतका भेद भारतवर्षके लिये अभिशाप ही सिद्ध हुआ है। इसलिये सरकार इस भेदको शीघ्र ही समाप्त कर देना चाहती है। ऐसी हालतमें जैन समाज अपने वर्तमान रवैयेपर कायम रह सकेगा, यह असंभव बात है। बल्कि आज इसका मतलब यह लिया जा रहा है कि नगण्य जैन समाज इस तरहसे एक बड़ी संख्यावाली जातिके साथ ऐसी दुश्मनी मोल लेना चाहती है जो उसके अस्तित्वके लिये खतरा सिद्ध हो सकती है। 'जैनमित्र' २९ जनवरी सन् ४८ के अंकमें जो डॉ० हीरालालजी नागपुरका वक्तव्य प्रकट हुआ है उससे इसी बातकी पुष्टि होती है। अभी उस दिन सिवनीमें जैन समाजकी ओरसे दिये गये अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें मध्यप्रान्त और बरारके मुख्यमन्त्री श्रीमान् पं० रविशंकरजी शुक्लने कहा था कि—"मुसलमानोंको जैनियोंसे सबक सीखना चाहिये। जिस तरहसे इनने भारतको अपनी भूमि समझा है और जिस प्रकार मिलजुल कर रहते हैं उसी प्रकार मुसलमानोंको भी रहना चाहिये।" हम मुख्यमन्त्रीकी नियतपर हमला नहीं करना चाहते हैं, परन्तु इतना अवश्य निवेदन करेंगे कि महापुरुषोंको अपने भाषणोंमें नपे-तुले शब्दोंका ही प्रयोग करना चाहिये, क्योंकि कौन कह सकता है कि भविष्य-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में इस प्रकारके शब्दोंका दुरुपयोग नहीं किया जायगा और जैनियोंके साथ अभारतीयों जैसा व्यवहार नहीं किया जायगा। मैंने यहाँपर इसका निर्देश किया है कि अभी तक जो लोग जैनियोंका हिन्दुओंसे पृथक् अस्तित्व स्वीकार नहीं करते थे उन्हें भी जैन समाजके प्रचारने उसके हिन्दुओंसे पृथक् अस्तित्वको स्वीकार करनेके लिये मजबूर कर दिया है और ऐसी हालतमें जैन समाज अपने स्वत्वोंकी भली प्रकार रक्षा कर लेगी, इसमें संदेह है। अब तक जैन नेता और जैन समाचारपत्र जैन संस्कृतिके खत्म होनेका भय दिखलाकर ही जैनियोंको हिन्दुओंसे पृथक् रहनेके लिये प्रेरित करते आये हैं। परन्तु उनके पास इस बातकी क्या गारंटी है कि वे इस तरहसे जैन संस्कृतिकी रक्षा कर ही लेंगे, जब कि खतरा निर्विवाद सामने है।

इस समय जैनियोंको बहुत ही सावधानीके साथ लिखने, बोलने और कार्य करनेकी जरूरत है। जैनियोंको सोचना चाहिये कि भगवान् महावीरके बाद जैन संस्कृतिका महत्तम उद्धारक यदि किसीको माना जा सकता है तो वह महात्मा गांधी हैं। इनकी क्रान्तिसे जितना बल जैन संस्कृतिको मिला है उतना दूसरी संस्कृतिको नहीं। परन्तु जैनियोंमें जिनसेनाचार्य जैसे प्रभावक-नेताओंका अभाव होनेसे जैनी महात्मा गांधीकी क्रान्तिका जैन संस्कृतिके लिये उचित उपयोग नहीं कर सके हैं। महात्मा गांधीके जीवनका अन्तिम जो लेख १ फरवरी सन् १९४८ के हरिजन सेवकमें प्रकाशित हुआ है उसमें उन्होंने जैन मन्दिरोंमें हरिजनोंको जाने देनेकी बात कही है। उनकी दलील यह है कि यदि जैन मन्दिरोंमें अजैन ब्राह्मण प्रवेश पा सकता है तो भंगीको इसलिये रोकना अन्याय है कि वह अछूत है। यह बात दूसरी है कि जैन विनयका समुचित रीतिसे संरक्षण करनेके लिये जैन मन्दिरोंके व्यवस्थापकों द्वारा नियम बनाये जा सकते हैं। प्रसन्नताकी बात है कि बीनाकी जैन समाजने सर्व-सम्मतिसे हरिजनोंके लिये अपने यहाँका जैन मन्दिर खोल देनेका निर्णय किया है। जबलपुरके कुछ प्रमुख जैन सज्जनोंसे अभी कुछ दिन हुए वरुआसागरमें मेरी इस विषयपर चर्चा हुई थी वे हरिजनोंको जैन मन्दिर खोल देनेके पक्षमें हैं। पूज्य पण्डित गणेशप्रसाद जी वर्णी जैन मन्दिर हरिजनोंको खोल देनेमें कोई बुराई नहीं समझते हैं और वे चाहते हैं कि बहुत शीघ्र जैन मन्दिर हरिजनोंके लिये खोल दिये जाना चाहिये।

मेरा जैन समाजसे निवेदन है कि वह उदारतापूर्वक जैन मन्दिर हरिजनोंके लिये खोल देनेका सर्व सम्मत फैसला करे। इसीमें जैन समाज और जैन संस्कृतिका फायदा है और बीनाकी जैन समाजने जैन विनयका संरक्षण करनेके लिये जैसी नियमावली बनाई है वैसी नियमावली बनाकर मन्दिरके दरवाजेपर टांक देना चाहिये। जैन मन्दिरोंमें शृंगारका जो सामान प्रदर्शनके लिये लगा रहता है उसे अलग कर देना चाहिये और ऐसे साधन जुटा देना चाहिये, ताकि लोगोंको मन्दिरोंमें वीतरागताका अच्छा परिचय मिल सके।

ता० १२ फरवरीके 'जैन मित्र'में 'विचित्रता' शीर्षकसे एक लेख श्री राजमल जैन बी० काम, 'राजेश' कलकत्ताका प्रकट हुआ है उस लेखसे उनका जैनत्वके प्रति श्रद्धानकी अपेक्षा दम्भ ही प्रकट होता है। मैं ऐसे लेख लिखनेवालोंसे प्रार्थना करूँगा कि हमलोग केवल भावुकताके ही शिकार न बनें, आपके ऊपर जैन संस्कृतिके भविष्यकी जबाबदारी है। यदि हम इस तथ्यको न समझ सके और समयका उचित उपयोग न कर सके तो भावी पीढ़ीके सामने हमलोग मूर्ख सिद्ध होंगे। अन्तमें मैं इतना और स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यदि किसी तरफसे जैन संस्कृतिको खत्म कर देनेकी ही साजिश की जाती है तो उसके विरुद्ध हमारा सर्वदा तैयार रहना अनुचित न होगा। मैं ऐसे किसी भी उचित प्रयत्नका स्वागत करूँगा और इसके लिये 'सन्मार्ग प्रचारिणी समिति' आगे करती हुई दिखाई देगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org